National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2021; 1(37): 237-243
© 2021 NJHSR
www.sanskritarticle.com

डॉ. अंशु सिंह झरवाल
हिंदी विभाग,
लक्ष्मीबाई कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Correspondence:
डॉ. अंशु सिंह झरवाल
हिंदी विभाग,
लक्ष्मीबाई कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

बिहारी के रसात्मक दोहों का चित्रण : नारी सन्दर्भ में

डॉ. अंशु सिंह झरवाल

सारांश

"साहित्यसङ्गीतकलाविहीन: साक्षात्पशु: पुच्छविषाणहीन:
तृण न खादन्नपि जीवमानस्तद्भागधेयं परमं पशूनाम् ॥"[1]

अभिप्रेत, कि प्राचीन ऋषियों ने साहित्य, संगीत आदि कलाओं से रहित मनुष्य को पशु तुल्य कहकर, काव्य और कला को बराबर का दर्जा दिया है। कला के माध्यम से कवि या कलाकार अपनी कल्पनाओं, भावनाओं अथवा क्रियाओं को अभिव्यक्त या प्रदर्शित करता है। भारतीय दर्शन में कला को, कौशल आश्रित क्रिया शब्द से संज्ञायित किया गया है। कहने का तात्पर्य है, कि कला का कैसा भी रूप हो, वह कार्यात्मक देह-अंग, बौद्धिक और मनोवैज्ञानिक कुशलता की अल्पता में संरचित नहीं हो सकती है।

नाट्यशास्त्र, कामसूत्र, शुक्रनीति और शैव तंत्रों में कुछ भिन्नता होते हुए भी 64 कलाओं का उल्लेख है। भारतीय इतिहास के मध्यकाल में उपयोगी कलाओं में शृंगार कला के अतिरिक्त अन्य कलाएँ पिछड़ गई थी। काव्यकला, संगीतकला चित्रकला, मूर्तिकला और वास्तुकला जैसी ललित कलाओं का ही प्रमुख स्थान रह गया था, क्योंकि ये सौन्दर्य के निर्वहन में सक्षम थी तथा रसिक प्रेक्षक या श्रोताओं के आस्वादन का कारण होती थी। कला, सौन्दर्यशास्त्र के तत्व जगत, सौन्दर्य-स्रोत, सौन्दर्यानुभूति, रसानुभूति, कलाकृति, अभिव्यक्ति तथा उसके अनुभव का विश्लेषण आदि को अभिव्यक्त करने में समर्थ थी और आज भी है। दूसरे शब्दों में कला, रचना या सृजन के एकैक रूप और स्वरूप की परिचायक होती है।

बीज शब्द : कवि बिहारी, हिन्दी दोहे, कविता, नाट्यशास्त्र, कामसूत्र, शुक्रनीति, रसवादी दोहे।

मध्यकाल के पूर्व स्त्री का स्थान समाज में पूजनीय और वन्दनीय था। मनु ने नारी पर अनेक टिप्पणी करने पर भी कहा, कि जहाँ नारी की पूजा (सम्मान) होती है, वहाँ देवता (सुख-शान्ति) निवास करते हैं। इतना ही नहीं, उसे महान् शिक्षिका से भी विभूषित किया है :

"उपाध्यायान्दशाचार्य: आचार्याणा शत पिता।
सहस्रं तु पितृन्माता गौरवेणातिरिच्यते ॥"[2]

अंतर्भाव, कि एक आचार्य का सौ उपाध्यायों से, पिता का सौ आचार्यों से और माता का एक हज़ार पिताओं से भी अधिक गौरव होता है। संस्कृत साहित्य के अनेक नाटकों और काव्यों में नारी के अनेक रूप परिलक्षित होते हैं। आचार्यों ने उसके रूप-सौन्दर्य को बहुतेरे उपमानों प्रदर्शित किया है। एक एक अंग के लिए अनेक सादृश्य विषयों-वस्तुओं से तुलना की है। कहीं- कहीं पर उपमान को भी उसकी सुन्दरता के सामने अपमानित होना पड़ा है। पाली, अपभ्रंश आदि ग्रन्थों में भी काव्यकारों ने उसके लावण्यमयी रूप का ही पोषण किया है।

समय परिवर्तनशील के परिवेश में, भक्त कवियों ने स्त्री को दोषों की गठरी और नरक की खान तक कहा। परन्तु शृंगार के बिना भक्ति-भाव में सन्त अधिक समय तक नहीं रमण कर सके। उन्हें, भक्ति का रसमय रूप आनन्द-सागर से अधिक लगने लगा कम था।

हरिदासी सम्प्रदाय के सभी सन्त-कवि राधा की प्रिय अष्ट सहेलियों का शृंगारिक रूप धारण कर, राधा के साथ कृष्ण के मोहक रूप और क्रीड़ाओं का आनन्द प्राप्त करने लगे थे। कलाकाल में प्रवेश करते ही कवियों को स्त्री सुन्दरी, नायिका और भोग्या के रूप में दिखाई देने लगी। यों तो गाथा सप्तशती, चौर पंचाशिका, शृंगार प्रकाश, गीतगोविंद जैसे अनेकों ग्रंथों में कृष्ण की शृंगारिक लीलाओं का चित्रण हो चुका था। दरबारी संस्कृति से सम्मोहित कवियों ने नारी-रूप का ऐसा रस परोसा, कि सम्पूर्ण समाज उसकी चाहत में अनुरत हो गया। कवि की प्रतिभा, तरुणाई से आवृत नारी के भेद-प्रभेद, अंग-सौन्दर्य, प्रेम-व्यापार और सुरतान्त के गदकारा चित्रण में अन्य वाग्गेयकारों से निरन्तर वृद्धि पाने में लग गई थी।

अब हम मूल प्रश्न पर आते हैं, कि चित्रकला कविता की जननी है या कविता चित्रकला की। आदिकाल के साहित्य अध्येता इस बात से अपरिचित नहीं है, कि आदिमानव ने सर्वप्रथम अपनी भावनाओं को व्यक्त करने के लिए गीली मिट्टी और गुफाओं के पत्थरों पर कुछ आड़ी-तिरछी चित्रनुमा रेखाएँ खींचकर, अपनी आन्तरिक भावनाओं को व्यक्त किया था। तत्पश्चात् पशुओं या मानव आकृतियों के पेड़-पौधों के फूल-पत्तों, खनिज, रक्त, खड़िया या गेरू मिट्टी में पशु की चर्बी मिलाकर रंगीन, गतिमय एवं सजीव चित्र बनाए जाने लगे थे। सिन्धु घाटी सभ्यता में अग्नि से पके मिट्टी के बर्तन, मानव, पशु-पक्षी आदि की गोल और रंगीन बनावट प्राप्त हुई हैं। वैदिक काल में देवताओं, यज्ञ शालाओं की लकड़ी की चौखटों पर बनाई गई स्त्री देवियों की आकृतियाँ उल्लेखित हैं। महाकाव्य युग की प्रेम-कथाओं में कुछ चित्र अवश्य देखने को मिलते हैं। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के 'चित्रसूत्रम्' में स्पष्ट लिखा है, 'कि ललित कलाएँ, सौन्दर्य या लालित्य के आश्रय से व्यक्त होने वाली कलाएँ हैं अर्थात् जिनमें सुकुमारता, सौन्दर्य एवं विनोद हो वही कला है। ग्रंथ में यह भी कहा, कि चित्रकला काव्य-चेतना का गतिमय चित्रण है। वह कलाकार की धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्ति हेतु की गई कठोर साधना है, क्योंकि कठोर तपस्या में चित्रकार की दृष्टि का पैनापन और चित्र का जीवन्त रूप निभृत रहता है।'[3] चित्रकला प्रस्तर और काष्ठ के उपरान्त केलों के पत्तों, फड़, भित्ति, कपडों के टुकड़ों, कागज, कैनवाश आदि पर क्रमिक रूप में विकसित होती गयी। इतना स्पष्ट करने के पश्चात् उत्तर आसान हो गया, कि आदिकाल के चित्रों ने कवि-हृदय को आकर्षित किया और उसके मुख से जो भी शब्द निकले उनसे कविता और संगीत का आविर्भाव हुआ। परिवर्तनशील प्रकृति के नियम ने (सन् 1000 ई. के आस-पास) अब चित्रकारों को कवियों के चित्र-काव्य पसन्द आने लगे और उन पर अनेक रंगों के मिश्रण से प्रशंसनीय चित्र निर्मित किये।

16-17 वीं सदी में मुख्य रूप से राजस्थानी (राजपूत) और तत्पश्चात् 17-19 सदी में राजपूत और मुगल शैली से पहाड़ी चित्र शैलियों का विकास हुआ। राजस्थानी चित्रकला में मालवा, मेवाड़, मारवाड़, आमेर/जयपुर और हाड़ौती स्कूल में लघु चित्रों का विस्तार देखने को मिलता है। परन्तु मेवाड़ और जयपुर-किशनगढ़ शैली में राधा-कृष्ण की लीला, रसिकप्रिया, रागमाला, बारहमासा, गीतगोविंद, रामायण आदि के चित्र अधिक देखने को मिलते हैं। सन् 1719 में मेवाड़ शैली के चित्रकार जगन्नाथ ने बिहारी सतसई के दोहों के भावनात्मक चित्र प्रस्तुत किये। उधर 17 वी सदी के आस-पास पहाड़ी लघु चित्रकला में खासकर बसोहली, कांगड़ा, गुलेर, नूरपुर शैली सम्मिलित हैं, जिनके प्रमुख विषय राधा और कृष्ण की प्रेम-लीला, गीतगोविंद, रसिकप्रिया, भगवत पुराण, रामायण, बारहमासा, प्रकृति आदि के चित्र हैं। कांगड़ा के राजा संसारचंद (सन्1800 के आस-पास) के संरक्षण में मानकू, फत्तू, खुशाला आदि कई निपुण चित्रकारों ने बिहारी सतसई के अधिकांश दोहों का प्रतिबिम्बन तूलिका और रंगों द्वारा किया है।

अतः काव्य और चित्रकला में प्रगाढ़ संयोजन है; चित्र अवाक् कविता है तो कविता सवाक् चित्र होती है अर्थात्, जो भावभिव्यक्ति हृदय से निकली कविता करती है वही रंग और रेखाओं के जरिये चित्र भी प्रकट कर देते है। कला की ये दोनों पद्धतियाँ, कार्यक्षेत्र (भाव-रूप) की गूढ़ताओं को सामाजिक के अंतःकरण में उदबुद्ध करती हैं और साधारणीकरण की दशा को बखूब पूर्ण करती हैं। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के 'चित्रसूत्रम्' खण्ड में ललित कलाएँ, सौन्दर्य या लालित्य के आश्रय से व्यक्त होने वाली कलाएँ हैं अर्थात् जिनमें सुकुमारता, सौन्दर्य एवं विनोद हो। यह भी कहा, कि चित्रकला काव्य-चेतना का गतिमय चित्रण है। वह कलाकार की धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्ति हेतु की गई कठोर साधना है, क्योंकि कठोर तपस्या में चित्रकार की दृष्टि का पैनापन और चित्र का जीवन्त रूप निभृत रहता है।

17वीं सदी के बिहारीलाल, आमेर के मिर्जा राजा जयसिंह प्रथम के दरबारी कवि-रत्न थे। इन्होंने भक्ति, नीति और शृंगार युक्त सतसई की रचना की, जिसका प्रत्येक दोहा, श्रोता या अध्येता के लिए प्रमोद और उमंग का प्रदायक है। रचना के शब्द-जनित बिम्ब-सौन्दर्य ने राजाओं, बादशाओं, रहिसों और चित्रकारों को आकर्षित किया। परिणामतः राज्य संरक्षण में अनेक चित्रकारों ने 'सतसई' के अधिकांश दोहों के भावानुसार यथासम्भव चित्र तैयार किये। ये दोहे-चित्र, राजस्थानी (मेवाड़,आमेर) और राजस्थानी से उद्भूत पहाड़ी (कांगड़ा, बसौली) लघु चित्रकला में देखने को मिलते हैं, जिनके अद्भुत सौन्दर्य (मनोरंजक और रसात्मक) की प्रतीति सच्चे दर्शक को ही हो पाती है। यहाँ लगभग मेवाड़ और बसोहली शैली के चित्र उद्धृत किये हैं।

विषय के व्यापकत्व और सीमा के औचित्य पर गौर करते हुए, कवि की नारी और उसके भाव-चित्र मिसाल के तौर पर यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। निम्बार्की बिहारी राधा के अनन्य भक्त थे। वे आनन्द स्वरूप राधिकाजी के शृंगारिक प्रभाव में, निमग्न होकर, रसमय दोहों

की रचना करते हैं। सर्वप्रथम वे नारी रूप राधिका की उपासना को एक कल्पित दोहे छंद में कहते हैं :

भक्त-विनती

"मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ।
जा तन की झाँई परैं, स्यामु हरित-दुति होइ॥"[4]

बिहारी राधा (सर्वज्ञ) से संसार के संकटों से छुटकारा दिलाने की प्रार्थना कर रहे हैं। तुम्हारी थोड़ी सी भी झलक कृष्ण के लिए प्रसन्नता का कारण बन जाती है और यदि उनके शरीर की कान्ति कृष्ण के तन पर पड़ जाय, तो वह हरे रंग के दिखाई देने लगते हैं या भक्त के हृदय में आपका ध्यान आते ही उसके सारे दोष अविलम्ब नष्ट जाते हैं। पहाड़ी शैली के चित्र में, कवि बिहारी ने मुगलकालीन घेरदार सफ़ेद जामा पहन रखा है और शिर पर बालों को इकट्ठा करके पटका (पाग) बांध रखा है। कवि राधा-कृष्ण के सामने हाथ जोड़े हुए हैं। चित्र में मूछें और कलम की आकृति काफी बड़ी दिखाई दे रही हैं, जो काले रंग की हैं। कृष्ण के अधोवस्त्र में पीला रंग, राधा की साड़ी में लाल और फर्श के लाल रंग में काली रेखाएँ दिखाई गई हैं। कृष्ण का कलेवर हल्के नीले व राधा का श्वेत रंग में दिखाया गया है।

भंगिमा-सौन्दर्य

"अहे दहेड़ी जिनि धरै, जिनि तूँ लेहि उतारि।
नीकैं है छींके छुवै ऐसैं ई रहि, नारी॥"[5]

नायक, नायिका की अदा को देखकर कहने लगा, कि तू छींके पर रखी दही-मटकी (दहेड़ी) को कभी उतारती है और कभी रखती है, तू ऐसा मत कर। तू दहेड़ी के छींके को छूती हुई खड़ी रह। इस मुद्रा में अच्छी लग रही है। (क्योंकि उसकी कमर और स्तनों के उभार के सौन्दर्य ने नायक को अधिक आकृष्ट कर लिया है।)

पहाड़ी लघु चित्र शैली में, इस चित्र को रंग और तूलिका द्वारा मनमोहक बनाया गया है, जिसमें नायिका राधा ने छींके पर से दहेड़ी को उतारने के प्रयास में दोनों हाथ उसके लगा रखे हैं। नायक कृष्ण हाथ से इशारा करके कह रहे हैं, कि तू इसी मुद्रा में कुछ देर खड़ी रह। वह नायिका की लोभक और आकर्षक मुद्रा को देखते रहना चाहते हैं। चित्र में लाल, पीले और नीले रंगों की चटक है। थोड़े से गुलाबी रंग ने चित्र को और अधिक कशिश कर दिया है। चटकीले रंग, परहास के लिए अनुकूल होते हैं।

हाव-मौग्ध्य

"कर समेट कच भुज उलटि, खएँ सीस पटु टारी।
काकौ मन बाँधे न यह, जुरा बाँधनहारी॥"[6]

बालों को हाथों से समेट और भुजाओं को शिर के दोनों ओर ऊपर ले जाते हुये, साड़ी को हटाकर, बालों का गूँथने वाली नायिका ने किसके मन को वश (मोहित) नहीं किया है, अर्थात् उसकी यह मुद्रा सबको आसक्त करने वाली है।

मेवाड़ और बसोहली चित्र शैली में नायक ने, एक युवती को अपने शिर की चुनरी को हटाकर, एक हाथ को शिर के बालों पर और दूसरे हाथ को पीछे ले जाते हुए जुड़ा बांधने के प्रयास की मुद्रा में दृश्यमान किया है। नायिका की ओर देखते हुए, एक सखी ने हाथ में केश-शृंगार का पॉट ले रखा है। दोनों ने आड़ी और बुंदकीदार रंगीन पट्टियों का घेरदार लहंगा पहन रखा है। यह मुद्रा किसके मन को एकटक नहीं करेगी ? चित्रांकन में लाल, पीले, काले, हरे, नीले, भूरे आदि रंगों का उचित प्रयोग किया है।

अनुभाव-वैभव

"कहत, नटत रीझत खिझत, मिलत खिलत लजियात।
भरे भौन में करतु हैं, नैननु हीं सब बात॥"[7]

बिहारी नायक नायिका की अनेक संचारी चेष्टाओं का चित्र आंखों के माध्यम से उपस्थित करते हैं। परिवार के बड़े-वृद्ध लोगों के मध्य में बैठी हुई नायिका, (लज्जावश) अपने मन की सारी बात आँखों द्वारा नायक से कह देती है और नायक भी।

कांगड़ा शैली के एक लघु चित्र में, दो स्त्री एक तरफ खड़ी होकर बात कर रही हैं और दो दूसरी ओर। नायिका उन चारों के मध्य चलती सी कृष्ण की ओर शिर को घुमाकर देखने में खोई सी जान पड़ रही है। कृष्ण संगमरमर से बने भवन में एक ओर थोड़े से खुले भाग में गर्दन टेड़ी करके खड़े हैं।(हो सकता है राधा के मना करने पर झुंझलाहट हो)। भवन के एक ओर खुला विस्तृत वन-प्रान्त दिखाई दे रहा है, जिसमें दूर-अतिदूर दो पक्के घर बने हुए हैं। नायक वहाँ कहीं एकान्त में मिलन-स्थान पर ले चलने को नायिका से कह रहा हो। इस चित्र में बिहारी के दोहे का सम्पूर्ण चित्रण नहीं हो सका है। लाल, हरे, पीले, सफ़ेद, काले आदि रंगों के बाजिब प्रयोग से चित्र को अधिक आकर्षक और सुन्दर बनाया गया है।

एडी-लालिमा

"पाइ महावर दै◌ंन को, नाइनि बैठी आइ।
फिरि फिरि, जानि महावरी एडी मीड़ति जाइ॥"[8]

नायिका के पैरों में नाइन (सेविका) बैठकर महावर लगाने लगी, लेकिन नायिका की एडी में लालिमा प्रकृतिस्थ होने से, नाइन को महावर के रंग में सनी हुई रुई की गोली में और एडी के रंग में कोई पार्थक्य नहीं दिखाई देता है। इसलिए भ्रम की स्थिति उत्पन्न होने से एडी को ही महावर की गोली समझ कर, बार-बार मिडती (मलती) जा रही है।

बसोहली लघु चित्र में नायिका आसन पर बैठी हुई है, जिसका एक पैर नाइन ने एक हाथ में ले रखा है तथा दूसरे हाथ से महावर लगा रही है। महावर लगाने के बर्तनादि भी वहाँ रखे हैं। दोनों स्त्रियों ने एक जैसी बुंदकेदार साड़ी और चुनरी ओढ़ रखी हैं। हाथों में चूड़िया व आभूषण दिखाई दे रहे है। मुख और तन को उज्जवल श्वेत दिखाया है। शेष भाग को नीला और परिरेखा को लाल-पीले रंग से दर्शाया गया है।

बिहारी सतसई की अनवर चंद्रिका टीका, जिसके टीकाकार

शुभकरण दास एवं सम्पादक हरिमोहन मालवीय हैं। पुस्तक के कवर पर उक्त दोहे के अनुरूप ही मुद्रांकन किया है। रंगों में चटक लाल और काले रंग का प्रयोग किया है। चेहरा उज्ज्वल और फर्श हल्के भूरे रंग में दिखाई दे रही है।

विरह-ताप

"औंधाई सीसी, सु लखि बिरह-बरनि बिललात।
बिच हीं सूखि गुलाब गौ, छिटौ छुयौ न गात॥"[9]

नायिका की सखी नायक से कहती है, कि आपके विरह की अग्नि में तपती हुई नायिका चीख रही है। मैंने (सखी) उसके शरीर की तपन को शीतल करने, उस पर गुलाब जल की शीशी को ही उल्ट दी, लेकिन एक भी बूंद उसके शरीर को छू नहीं सकी अर्थात् उसके शरीर की ताप-तरंगों से गुलाब जल वाष्प रूप में परिवर्तित हो गया।

चित्रकार ने महल में एक स्त्री को मसनद के सहारे घुटनों को मोड़कर, साड़ी और चोली में नीचे मुँह किये, उदास मन से बैठी हुई चित्रित किया है। दोनों हाथ तकिये पर रखे हुये हैं। दूसरी स्त्री साड़ी औढ़े, एक हाथ से, अपनी सखी के शिर पर गुलाब-जल की शीशी उड़ेल रही है और दूसरे हाथ में एक और गुलाब-जल की शीशी पकड़े रखी है। चित्र को रंगीन सीमा रेखा से आबद्ध किया गया है। पहाड़ी चित्रकला के बसोहली चित्रकार ने इस चित्र में लाल, पीले, काले, उज्ज्वल और नीले रंगों का प्रयोग उत्कृष्ट तरीके से किया है।

दूती-धर्म

"रही पैज कीनी जु, दीनी तुमहिं मिलाइ।
राखहु चंपकमाल लौं, लाल हियै लपटाइ॥"[10]

नायक से घटदासी कहती है, बड़ा दुस्साध्य प्रयोजन था, तथापि मैंने नायिका को लाकर तुमसे मिला दिया है। अब उसे चम्पा की माला के समान अपने हृदय के लिपटा कर रखना। (कहीं निरादर मत कर देना, जो विलग हो जाये)

बसौली चित्र शैली में, कृष्ण मटमैले रंग वाली पहाड़ी के पास में, चमकीले और गहरे हरे रंगों वाले वृक्षों में खड़े, उस ओर देख रहे हैं, जिधर से दूतिका नायिका को हाथ से पकड़ कर ला रही है। नायिका ने लज्जा से शिर झुका रखा है और नायक की ओर आगे बढ़ने में ठिठक रही है।

चित्र की आयताकार सीमा को लाल रंग की चौड़ी पट्टी के नीचे सफ़ेद लघु रेखा से अभिमंडित किया है। कृष्ण को नीले, गले की वैजयंती माला को सफ़ेद, मुकुट को स्वर्ण और बालों को काले रंग में प्रदर्शित किया गया है। नायिका ने बूंटीदार चटक लाल रंग का घाघरा और चोली पहन रखे हैं। उसकी ओढनी नीले रंग की है और शरीर उज्ज्वल हल्के पीत वर्ण का है। साँवली सखी ने लाल, पीले आदि रंगों के कपड़े पहन रखे हैं।

जल-विहार

"ले चुभकी चली जाति, जित जित जल-केलि-अधीर।
कीजत केसरि-नीर से, तित तित के सरि-नीर॥"[11]

नायिका (जल-विहार करते समय) नदी के पानी में चुभकी लेकर जहाँ कहीं भी तैरती हुई जाती है, उधर का पानी चंचल हो जाता है और वहाँ के पानी का रंग केसरवत (पीले रंग का) दिखाई देने लग जाता है। (क्योंकि नायिका के यौवन में तरुणाई है)।

मेवाड़ शैली के इस चित्र में एक स्त्री कृष्ण से, जो शायद नायिका के तन की स्वर्णिम कान्ति से प्रभावित नदी के जल के बारे में बात कर रही है। फिर भी कृष्ण के प्रेम न करने पर, हाथ फैलाये चेतावनी जैसी मुद्रा में जान पड़ती है। दूसरी दो स्त्रियाँ वस्त्राभूषणों को पहने, नदी के स्थिर पानी में खड़ी बतिया रही हैं और अन्य दो नदी में तैर रही हैं। नदी के आस-पास की भूमि और किनारों पर कुछ फूल– पत्तेदार पौधों और एक केले के पेड़ को भी चित्रकार ने अंकित किया है तथा लाल, सफ़ेद, हरा, पीला, काला, नीला, केसरिया आदि रंगों के संलयन से चित्र को पूर्णता प्रदान की है।

सुकुमारता

"भूषण- भारु सँभारिहै, क्यौं इहि तन सुकुमार।
सुधे पाइ न धर परैं, सोभा हीं कैं भार॥"[12]

सखी अपनी प्रिय सखी (नायिका) से कहती है, कि तेरे ये नाजुक अंग, आभूषणों का भार कैसे सह सकते हैं ?, क्योंकि यौवन-सौन्दर्य के भार से, तेरे पैर पहले ही जमीं पर सीधे नहीं पड़ रहे हैं, अर्थात् तुझ जैसी कोमलांगी और लावण्यमयी को सौन्दर्य के प्रसाधनों की आवश्यकता नहीं है।

बसोहली शैली के चित्रण में एक वृक्ष के नीचे नायिका और उसकी सखी खड़ी हुई हैं। नायिका का शरीर दुबला-पतला एवं कोमल है। वह ओढनी, घाघरा और चोली पहने हुये हैं और आभूषणों को भी धारण कर रखे हैं। सखी दोनों हाथों को आगे करके नायिका से कुछ कह रही है और नायिका एक हाथ से वृक्ष की टहनी पकड़े हुये है तथा दूसरा हाथ सखी की ओर कर रखा है (जो कुछ बोलने का संकेत है)। नायिका के लहंगे का रंग नीला है और जिसकी आडी पट्टियाँ में बूंदियाँ लगी हुई हैं। सखी की चूनरी का रंग नीला है तथा उसके लहंगे को छोटे-छोटे चौखानों में बूटियों से सजाया है। चित्र में ऊपर की ओर गहरे नीले बादल दिखाई दे रहे हैं। बॉर्डर की रेखाएँ लाल-पीले रंग से सुन्दर बनाई गई हैं। अतः चित्रकार ने सफ़ेद, लाल, नीले, पीले और काले रंगों का प्रयोग सरलता से किया है।

प्रथम समागम

"नाक मोरि, नाहीं ककै नारि निहोरै लेइ।
छुअत ओठ बिच आँगुरिनु बिरी बदन प्यौ देइ॥"[13]

नायक प्रथम मिलन के सुअवसर पर नायिका को अपने हाथ से पान खिलाने की प्रथा के निर्वहन करने का प्रयास करता है । इस पर नायिका नाक को तिरछी-बाँकी कर अपनी अरुचि प्रकट करती है, कभी वह मना कर देती है, लेकिन नायक की पुनः की गई विनती को, उपकार स्वरूप वह स्वीकार कर लेती है। अब नायक अपनी अंगुलियों से उसके होठों के स्पर्श का सुख लेता हुआ, बिरी (छोटा पान)उसके मुख में दे देता है।(इस दोहे में नायक-नायिका की कई क्रियाएँ प्रकट हुई हैं)

बसौली चित्र शैली में, राधा-कृष्ण मसनद लगाये, एक षट्कोण सोफे पर बैठे दिखाई देते हैं । कृष्ण ने एक हाथ को (पान लिये) राधिका की ओर बढ़ा रखा है, लेकिन राधिका ने अपने दाहिने हाथ से कृष्ण के उस हाथ को कलाई के नीचे से पकड़ रखा है और दोनों एक दूसरे की ओर देख रहे हैं । कवि द्वारा वर्णित चेष्टाओं को चित्रकार ने सुन्दर रंगों से चित्रित किया है । यहाँ कृष्ण- राधा, नायक और नायिका हैं । चित्र के ऊपरी भाग में दोहा अंकित है और बादलों के मध्य, अर्द्ध गोलाकार सफ़ेद रेखा रेखित की गई है । चित्र के चारों ओर रेखा-पट्टी को लाल-पीत रंग में तथा पार्श्व को हल्के पीले रंग से दिखाया गया है । राधा-कृष्ण के बदन को श्वेत-श्याम रंग से तथा अन्य वस्त्र, मसनद, सोफा, पेड़, फर्श आदि को सहज रंगों से सज्जित किया है, जो स्वाभाविक और आकर्षक बन पड़े हैं ।

तिरछी चितवन

"तिय कित कमनैती पढ़ी, बिनु जिहि भौंह-कमान ।
चलचित-बेझैं, चुकति नहिं बंक बिलोकनि-बान ॥"[14]

नायक कहता है, कि हे स्त्री ! तूने यह तीर-कमान चलाने की विद्या कहाँ से प्राप्त की है । तुम अपनी टेड़ी चितवन से चंचल चित वाले लोगों के हृदय को घायल करने में चूकती नहीं हो, जबकि बिना प्रत्यंचा के कमान से बाण लक्ष्य की ओर नहीं जा सकता, न हीं विदारित कर सकता और तिरछे बाण तो कदापि नहीं । दोहे का अन्तर्भाव, कि कामिनी की टेड़ी नजर, प्रेमी-हृदयों को अवश्य व्याकुल कर देती है ।

बसोहली शैली के चित्र में, कृष्ण एक हाथ में बाँसुरी लिये हुए हैं और दूसरे हाथ से वृक्ष की एक डाली पकड़े हुए खड़े हैं । वैजयन्ती माला और मोर-मुकुट धारण किये हुए हैं । कृष्ण के सामने राधा या नायिका मसनद के सहारे घुटने मोड़कर और पीठ देकर बैठी हुई है, परन्तु कृष्ण के आने के एहसास से वह मुँह को कृष्ण की ओर मोड़ते हुए देखने लगती है । उसका एक हाथ एक ऊरु पर और दूसरा हाथ विपरीत दिशा में आगे बढ़ा हुआ है । एक ओर रंगीन बूंटेदार सफ़ेद चादर पर दो तकिये रखे हुए हैं । चित्रकार ने हरे, नीले, लाल, सफ़ेद, पीले आदि के रंग-योग से, चित्र को भाव-पूर्ण बना दिया है ।

मुख-कान्ति

"छिप्यौ छबीलौ मुँहु लसै, नीलैं अंचल-चीर ।
मनौ कलानिधि झलमलै, कालिंदी कैं नीर ॥"[15]

सखी नायक में अनुराग उत्पन्न करने हेतु, नायिका के मुख की शोभा के बारे में नायक से कहती है, कि उसने अपना सुन्दर और मनोहर मुख नीले रंग की पारदर्शी साड़ी से लज्जावश ढक रखा है, जो ऐसा लगता है मानो चन्द्रमा अपनी चमकदार पीत आभा के साथ, यमुना नदी के चंचल पानी में झिलमिला रहा हो । चित्र में, पीले रंग की चित्र-सीमा को लाल रंग की रेखा से सजाया है । नायिका झीने धागों से बनी नीली ओढनी को मुँह के एक ओर आड़ की स्थिति में, हाथ से पकड़े हुये है । दूसरी तरफ से मुँह अवगुंठन रहित खुला दिखाई दे रहा है । उसने दूसरे हाथ में खिले हुये फूलों की एक डाली ले रखी है। चित्र को हल्के नीले रंग के बादलों तथा फूल-पत्तियों वाले पौधों से सुन्दर बनाया है । बसोहली चित्र शैली के सभी मुख्य रंगों से, प्रभावकारी चित्र रचा गया है । कांतिमान मुँह का उज्ज्वल रंग, नीली चुनरी, यमुना के पानी का नीला रंग आदि रंग चित्र में प्रस्तुत किये हैं।

वधू-लावण्य

"टटकी धोई धोवती, चटकीली मुख-जोति ।
लसति रसोई कैं बगर, जगरमगर दुति होति ॥"[16]

नायिका नव वधू है, जिसने अभी की धुली हुई धोती (साड़ी) पहनकर रसोई घर में खाना बनाने के लिए प्रवेश किया है, जहाँ उसका मुख अधिक कांतिमान तथा अरुणाई शोभित हो गया है । वह रसोई घर में बहुत दीप्तिमान लग रही है । उसकी साड़ी की उज्ज्वलता, मुख की चमक और ललाई से रसोई जगमगाने लगी है । इस कथन का अभिप्राय है, कि नायिका की सखी, नायक को आसक्त होने, उस रसोई घर में ले जाना चाहती है, जहाँ अकेली, सुन्दरता की साकार मूर्ति नायिका, खुले मुँह रसोई बना रही है ।

गुलेर शैली के अंडाकार चित्र में, चूल्हे पर रसोई बनाती नायिका को दिखाया गया है । उसने उज्ज्वल रंग की महीन साड़ी ओढ रखी है । काले लम्बे बालों को नीली चुनरी से ढककर बैठी हुई भोजन बना रही है । नायिका के मुख की कांति को भी उजागर किया है । चित्र के ऊपरी हिस्से में, एक सखी हरे वृक्ष के नीचे बैठे कृष्ण को नायिका के सौन्दर्य एवं उसकी स्थिति की सूचना दे रही है । कुछ सफ़ेद रंग की गायें भी वहाँ बैठी हुई हैं तथा आकाश में काले बादलों को घुमड़ते हुए भी चित्रित किया है । चित्र की सजावटी पट्टी को पीले और लाल रंग से सँवारा है । अतः चित्रकार ने चित्रण को यथासम्भव चित्ताकर्षक बनाने का प्रयास किया है ।

खण्डिता

"पलनु पीक अंजनु अधर, धरे महावरु भाल ।
आजु मिलै सु भली करी, भले बने हौ लाल ॥"[17]

नायिका नायक के कई दिनों के बाद आने पर कहती है, कि आपने बहुत सुन्दर रूप बना रखा है । आपकी पलकों में पान की पीक लगी हुई है और होठों पर अंजन के रेखा विद्यमान है तथा ललाट भी किसी स्त्री के पैरों के महावर से रंगा हुआ है (तात्पर्य, कि तुमने दूसरी स्त्री से

प्रेम किया है) । नायिका व्यंग्य में कहती है, कि पता नहीं आज प्रातःकाल मुझ से मिलने की सुध कैसे आ गयी, जो तुम्हारा मेरे प्रति बहुत अच्छा बर्ताव (एहसान) है । तुम इस रूप में बड़े अच्छे लग रहे हो (यानि बिल्कुल भी अच्छे नहीं लग रहे हो, मैं दुखी होकर, रात भर से इंतजार करती रही हूँ)।

सफ़ेद महल में राधा ने पीत रंग का बूटिवाला लहंगा पहन रखा है और पारदर्शी चूनरी गहरे लाल रंग की ओढ़ रखी है । उसके हाथ-मुँह पर ललाई की कांति है । कृष्ण को श्याम वर्ण का दिखाया है, जिसने शिर पर पीले रंग का साफा बांध रखा है तथा शरीर, हाथों और नीचे पैरों तक, एक ही पीले रंग का वस्त्र धारण कर रखा है । नायिका ने एक हाथ अपने मुँह के लगा रखा है तथा दूसरा हाथ कृष्ण की ओर थोड़ा सा उठकर रह जाता है । उपलाम्भ की मुद्रा का अंकन बसौली शैली के चित्रकार की अपनी विशेषता है ।

कृष्णाभिसारिका

"सघन कुंज घन घन- तिमिरु, अधिक अँधेरी राति ।
तऊ न दुरिहै स्याम वह, दीप शिखा सी जाति ॥"[18]

नायिका की सखी नायक से कहती है वृक्ष-लताओं से घनीभूत कुंज और आकाश में बादलों के कारण घनघोर अंधेरा, तिस पर भी अंधेरी रात्रि, फिर भी वह (मेरी सखी) नायिका दीपक की लौ के समान चली जा रही है।

कांगड़ा शैली के प्रमुख चित्रकार मोलाराम ने कृष्णाभिसारिका का चित्र बनाया है । नायिका वर्षा ऋतु के बादलों से घिरी अंधेरी रात के घोर अंधकार में अपने प्रेमी से मिलने के लिए जा रही है । अभी उसकी सोने की पायल पैर से खुल पड़ी हैं, जिसे लेने के लिए वह मुड़कर देखती है तो पास के वृक्ष के तने पर एक सर्प लिपटा हुआ दिखाई देता है और दूसरा जमीन पर रेंगता हुआ । बादलों में बिजली कडक और कौंध रही है । नायिका ने लाल रंग का लहंगा पहन रखा है । सर्पों और बादलों की बिजली की रेखा सफ़ेद दिखाई दे रही है । पेड़ अंधेरे में काले लग रहे हैं । नायिका ने नीले रंग की चुनरी औढ राखी है । बाल काले, बदन गोरा बदन और उज्ज्वल चेहरा है । एक हाथ चुनरी के नीचे है और दूसरा कोहनी से ऊंचा कर रखा है, जो किसी वैचारिक स्थिति को बताता है । एक चित्रकार ने बालक लिये, भूत का चित्रण किया है और पेड़ में चमगादड़ भी लटका दिये हैं ।

रास-लीला

"गोपिनु सँग निसि सरद की, रमत रसिकु रस-रास ।
लहाछेह अति गतिनु की, सबनु लखै सब-पास ॥"[19]

सरद ऋतु में आनन्द स्वरूप रास में रसिक कृष्ण गोपियों के साथ क्रीड़ा कर रहे हैं । वे इतनी शिघ्रता से नृत्य कर रहे हैं, कि हरेक गोपी को यह एहसास हो रहा है, कि कृष्ण हमारे ही पास नृत्य कर रहे हैं। और आनंद की उमंग में पागल हो रही हैं ।

बूंदी स्कूल मेवाड़ शैली के विघटन के पश्चात् 18वीं सदी के प्रारम्भ में विकसित होने लगी थी । इसके चित्रों में चमक और विभिन्न रंग की योजना की गई है । यहाँ की चित्रकारी उल्लासपूर्ण है । स्वयं राव छत्रशाल ने अपने महल की छत एवं दीवारों पर बूंदी के परम्परागत उच्च कोटि के चित्र बनवाये थे ।

कृष्ण के दोनों ओर पाँच पाँच गोपियाँ भी नृत्य मुद्रा में हैं । कुछ धौली-काली गायें भी वहाँ हैं , जिनमें कुछ गायें मधुर आवाज सुनकर अपने एक-एक पैर को ऊपर उठाकर नृत्य करने की मुद्रा में उत्सुक लग रही हैं । गायों ने अपने कानों को उस आवाज की ओर लगा रखे हैं । गोपिकाओं ने नीले-पीले परिधान पहन रखे हैं । किसी ने नीले रंग की चुनरी तो किसी ने भूरे रंग की चुनरी ओढ़ रखी हैं । चित्र में बगुले भी जोड़ों के रूप में उपस्थित हैं । दूसरी स्वयं की खोज की पेंटिंग में, कृष्ण वर्षा ऋतु में राधा के साथ बांसुरी वादन कर रहे हैं । बांसुरी का मधुर और मोहक संगीत सुनकर गोपियाँ भी वहाँ आ जाती हैं, जहाँ राधा के साथ कृष्ण बांसुरी बजा रहे हैं । वे राधा-कृष्ण के चारों ओर गोलाकार रूप में नृत्य करने लगती हैं । बांसुरी से निकली राग और तान ने उनको बेसुध कर दिया है । राग के अनुराग में इतनी आनन्द-विभोर और उमंगित हो गई, कि उनका नृत्य तीव्रतर होता चला गया । तन्मयता की इस घड़ी में गोपियाँ कृष्ण के साथ नृत्य करते हुए, आनन्द ले रही हैं । अब वे निरन्तर कृष्ण में लीन होना चाहती हैं । उनका नृत्य अनवरत चलता रहता है ।

कृष्ण ने पीले रंग का कमर से टकनों तक विशिष्ट वस्त्र पहन रखा है। कमर में हल्के कत्थई रंग का कमरबंद बांध रखा है । गले में वेजयंति माला पहन राखी है । शिर पर एक मोरपंख धारण किये हुये हैं । कलेवर नीले रंग में दिखाया गया है । शिर के पीछे सफ़ेद आभा मण्डल चित्रित किया है । कृष्ण ने आभूषण भी पहन रखे हैं और गोपियों के मध्य राधा के साथ बाँसुरी बजाते खड़े हुए हैं । गोपियाँ कृष्ण के साथ नृत्य मुद्रा में अंकित की गई हैं। उनके लाल, गुलाबी, नीले, पीले, हरे रंग के लहंगे हैं । चुनरी पारदर्शी एवं हल्की हरी, पीली, कत्थई रंग की हैं । पृष्ठभूमि में हरियाली है । ऊपर की ओर छोटे-बड़े पौधे हरे रंग में दिखाई दे रहे हैं ।

राधा-कृष्ण

"चिरजीवौ जोरी, जुरै क्यों न सनेह गँभीर ।
को घटि ए वृषभानुजा, वे हलधर के बीर ॥"[20]

कवि (या सखी) राधा-कृष्ण के युगल स्वरूप और अप्रतिम प्रेम को देखकर कहता है, कि दोनों की जोड़ी दीर्घ अवधि तक शोभा पाती रहे । और उनका प्रेम भी सदा अविचल क्यों न हो, क्योंकि वे एक दूसरे से कम नहीं हैं; राधा वृषभानु राजा की सुकुमारी है तो कृष्ण बलदाऊ के लघु भ्राता हैं । अर्थात् उनकी सुन्दर जोड़ी और प्रेम में कभी अमंगल न आने पाये । राजस्थान की प्रसिद्ध चित्रकला किशनगढ़ शैली की है । चित्रकार निहालचंद ने राजा सावन्तसिंह और उसकी प्रेयसी (विशाखा दासी) का चित्र राधा-कृष्ण के रूप में बनाया है, जो राधा– कृष्ण के प्रेम को ही स्पष्ट करती है । 'बनीठनी' का नाम राधा को ही चित्रकार ने समर्पित किया है । बिहारी सतसई के नायक-कृष्ण और नायिका राधा प्रेम स्वरूप ही हैं । उनके हास-विलास, लीलाओं, क्रीड़ाओं और विभिन्न चेष्टाओं में उत्कृष्ट प्रेम के ही दर्शन होते हैं । किशनगढ़ शैली, राधा-कृष्ण के प्रेमाकर्षक चित्रों से ही प्रसिद्धि प्राप्त कर सकी है ।

निष्कर्ष

अस्तु, रससिद्ध कवि बिहारी ने चित्रकारों को शब्दों के माध्यम से वो सब सामग्री प्रत्यक्ष या संकेत रूप में उपलब्ध करवा दी, जो उसे चाहिए थी । प्रत्येक दोहा एक पूर्ण चित्र का द्योतक है । कवि का विशिष्ट गुणधर्म इसी से प्रत्यक्ष होता है, कि उसने अपने दोहा छन्द में चाही गई नारी (नायिका) की छवि को पाठक और चित्रकार के मानस में प्रतिबिम्बित कर दिया है । चित्रकारों के अभिज्ञान ने ही कवि के दोहागत नायक-नायिका के अनुराग, प्रेम, मिलन, विरह और नायिका की दीप्ति, अंग-सौन्दर्य, भाव-भंगिमा, चेष्टा, क्रियाओं और प्रकृति के अनुरूप रंगीन, कलात्मक और रोचक चित्र सुनिर्मित कर दिये हैं।

राजस्थान चित्रकला शैली में प्रमुख रूप से मेवाड़ी, मारवाड़ी, हाड़ौती और ढूंढाड़ी चित्र शैलियाँ सम्मिलित हैं और इनकी उपशैलियों में भी पर्याप्त चित्र विद्यमान हैं । जहाँ तक राधा-कृष्ण सम्बन्धी चित्रों का प्रश्न है, वे नाथद्वारा, किशनगढ़, आमेर, कोटा, बूंदी, अलवर, भरतपुर, करौली आदि शैलियों के चित्रकारों ने ही उनकी विविध लीलाओं और भाव-अवस्थाओं का चित्रांकन किया है, लेकिन बिहारी सतसई का चित्रण मेवाड़ (उदयपुर-क्षेत्र) के महाराजा जगतसिंह के शासन काल में हुआ है, जिसके चित्रकार जगन्नाथ (सन् 1719) थे ।

मिर्जा राजा जयसिंह ने (आमेर राज्य) चित्रकला के विकास में पर्याप्त योगदान दिया । तब आमेर शैली में अनेक दोहों के भाव-चित्र बनाये गये । इसके उपरान्त जयपुर राज्य की स्थापना हो जाने पर, ढूंढाड़ (जयपुर) शैली में बिहारी सतसई के साहिबराम के अतिरिक्त अन्य चित्रकारों ने लम्बे समय तक अनेक भाव, चेष्टा और मुद्राओं के रंगीन चित्र उभारे । उन्होंने इन चित्रों को अधिकांशतः कागज या कपड़े पर अंकित किया गया है । प्राकृतिक दृश्यों में पेड़-पौधे, पहाड़, नदियों, ऋतुओं आदि के दृश्य उपस्थित किये । नायक-नायिका के वस्त्रादि में आवश्यकतानुसार सघन, चमकीले और हल्के रंगों का उपयोग किया है । लाल, पीला, हरा और नीला रंग प्रमुखता से देखने को मिलते हैं।

दूसरी प्रमुख पहाड़ी चित्र शैली है । प्रश्न उठता है, कि चित्रकला का विकास पहाड़ों में ही क्यों हुआ ? इसका हल इतिहास के माध्यम से समझ सकते हैं, कि औरंगजेब ललित कला का विरोधी ही नहीं, उसका नाशक भी था। अंजाम हुआ, कि चित्रकारिता पहाडी शासकों के अधीन पनपने लगी और वहीं विकास पाने लगी । सन् 1916 में ए. के. स्वामी ने पहाड़ी शैली को दो अलग-अलग रूपों में मान्यता दी । प्रथम कांगड़ा और द्वितीय बसोहली शैली । दोनों शैलियों में चौर पंचाशिका, रामायण, भागवत पुराण, गीतगोविंद, रसिक प्रिया, बिहारी सतसई के दोहे (विशेषकर कांगड़ा शैली में), बारहमासा आदि की चित्रकारी हुई, जिसके बहुतांश चित्र संग्राहलयों और पुस्तकालयों में प्राप्त हो जाते हैं । इस शैली में गेरुए, पीले, भूरे, लाल और हरे रंगों का व्यापक प्रयोग देखने को मिलता है। राधा-कृष्ण की प्रेम-लीलाओं के सजीले चित्र बनाने में चित्रकारों का मन अधिक रमा है। इस शैली पर मुगल शैली का प्रभाव झलकता है । इन चित्रों की पृष्ठभूमि में प्रकृति और सपाट भूमि का प्रयोग किया है ।

कांगड़ा शैली के प्रसिद्ध चित्रकार नैनसुख और मनकू थे। फत्तू, खुशाला, निक्का, रांझा आदि ने भी अपना सहयोग दिया । बसौली शैली की चित्रकारिता में सबसे अधिक मनकू और देवदास जैसे चित्रकारों ने प्रतिष्ठा प्राप्त की । बिहारी सतसई के नारी/प्रेयसी विषयक दोहों की चित्रकों ने जो चित्रकारी की हैं; वे अग्रिम पृष्ठों में उद्धृत कर दिये गये हैं।

सन्दर्भ-सूची

1.नीति-शतक, भर्तृहरि, अनुवादक बाबू हरिदास वैद्य, प्रकाशक हरिदास एंड कंपनी, मथुरा, संन् 1949, श्लोक सं. 12

2.मनु स्मृति, मनु, सम्पा. एवं व्याख्याकार सुरेन्द्रनाथ सक्सेना, प्रकाशक मनोज पब्लिकेशन्स,दिल्ली; संस्करण 2019, श्लोक 2/148

3.श्री विष्णु धर्मोत्तर पुराण में 'चित्रसूत्रम्' – एक विवेचनात्मक अध्ययन, अंजली, शोध, सन् 1992

4.बिहारी रत्नाकर, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 1, चित्र संख्या - 1

5.बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 699, चित्र सं. – 2

6.वही, दोहा सं.- 687, चित्र सं. – 3

7.बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 32 , चित्र सं. – 4

8.वही, दोहा सं.- 35, चित्र सं. – 5

9.बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 217 , चित्र सं. – 6

10. वही, दोहा सं.- 544, चित्र सं. – 7

11. बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 52, चित्र सं. – 8

12. वही, दोहा सं.- 322 , चित्र सं. – 9

13. बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 632, चित्र सं. – 10

14. वही, दोहा सं.- 356 , चित्र सं. – 11

15. बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं.- 538, चित्र सं. – 12

16. वही, दोहा सं.- 477 , चित्र सं. – 13

17. बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा स. 22, चित्र सं. 14

18. वही, दोहा सं. 299 , चित्र सं. 15

19. बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा सं. 291, चित्र सं. 16-17

20. बिहारी सतसई, जगन्नाथ रत्नाकर, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, संस्करण 2018, दोहा स. 677, चित्र सं. 18